विपरीत प्रत्यङ्गिरा-विधानम्
एवं
विपरीत प्रत्यङ्गिरा स्तोत्रम्

भाषा टीकोपेतं

संपादक-

श्री पण्डित रामजी शर्मा

प्रकाशक-

श्री दुर्गा पुस्तक भण्डार (प्रा०) लि०

५२७ ए/२, कक्कड़ नगर, (दरियाबाद),

इलाहाबाद (यू०पी०)

मूल्य रु० १२.००

विपरीत प्रत्यङ्गिरा-विधानम्
एवं
विपरीत प्रत्यङ्गिरा स्तोत्रम्

भाषा टीकोपेतं

संपादक–

श्री पण्डित रामजी शर्मा

प्रकाशक–

श्री दुर्गा पुस्तक भण्डार (प्रा०) लि०

५२७ ए/२, कक्कड़ नगर, दरियाबाद,

इलाहाबाद (यू०पी०)

 मूल्य रु० १२.००

प्रस्तावना

प्रस्तुत पुस्तक में विपरीत प्रत्यङ्गिरा देवी के अनुष्ठान का विषय भलीभाँति समझाकर लिखा गया है। सर्वप्रथम विनियोग, करन्यास, हृदयादिन्यास, दिगबन्धन और जप के लिए प्रत्यङ्गिरा-मन्त्र और साधन का विधान दिया गया है। फिर स्तोत्र हिन्दी टीका सहित है। दुःखी साधकों अथवा यजमानों की सारी समस्यायें इस स्तोत्र का विधिवत् पाठ तथा जप से हल हो जाती है। मारण, मोहन, स्तम्भन, वशीकरण, उच्चाटनादि सारी क्रियायें इस स्तोंत्र के स्मरण-मात्र से नष्ट हो जाती हैं और साधक व यजमान सुखी और प्रसन्न हो जाते हैं। इसकी साधना से शीघ्र सिद्धि प्राप्त हो जाती है और शत्रुओं का विनाश हो जाता हैं।

–रामजी शर्मा

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

ध्यानम्

खड्गं कपालं डमरुं त्रिशूलं
सम्बिभ्रती चन्द्रकलावतंसा ।
पिङ्गोर्ध्वकेशोऽसित-भीमदंष्ट्रा
भूयाद् विभूत्यै मम भद्रकाली ॥

खड्ग, कपाल, डमरू तथा त्रिशूल को धारण करने वाली देवी भद्रकाली, जिनके मस्तक में चंद्रकला सुशोभित है, जिनके केश पीले एवं ऊपर को उठे हुए हैं तथा जिनके दाँत बड़े भयंकर एवं असित वर्ण के हैं, हमारा कल्याण करें ।

विपरीत प्रत्यङ्गिरा-स्तोत्र विधानम्

विनियोगः —

ॐ अस्य श्री विपरीत-प्रत्यङ्गिरा मन्त्रस्य भैरव-ऋषिः, अनुष्टुप् - छन्दः, श्री विपरीत प्रत्यङ्गिरा देवता, ममाऽभीष्ट-सिद्धयर्थे जपे पाठे च विनियोगः ।

दाहिने हाथ में जल लेकर, "ॐ अस्य श्रीविपरीत-प्रत्यङ्गिरा मन्त्रस्य', से 'जपे पाठे च विनियोगः' तक मन्त्र पढ़कर हाथ का जल भूमि या किसी पात्र में छोड़े ।

करन्यासः —

ऐं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः ।

से दोनों अँगूठे का स्पर्श करे ।

'ॐ ह्रीं तर्जनीभ्यां नमः' से दोनों अँगूठे की बगलवाली अँगुली तर्जनी का स्पर्श करे ।

'ॐ श्रीं मध्यमाभ्यां नमः' पढ़कर बीच की अँगुली को छुए ।

'ॐ प्रत्यङ्गिरे अनामिकाभ्यां नमः' कहकर बीच की अँगुली के बगल वाली अँगुली का स्पर्श करे ।

'ॐ मां रक्ष रक्ष कनिष्ठिकाभ्यां नमः' से छिंगुलिया अँगुली का स्पर्श करे ।

'ॐ मम शत्रून् भञ्जय भञ्जय करतलकर-पृष्ठाभ्यां नमः' से दोनों हाथों की हथेलियों और उनके पृष्ठ भागों का स्पर्श करना चाहिए

इसी प्रकार हृदयादिन्यास भी करे ।

हृदयादिन्यास: —

'ॐ ऐं हृदयाय नमः' से हृदय का स्पर्श करे ।

'ॐ ह्रीं शिरसे स्वाहा' से सिर का स्पर्श करे ।

'ॐ श्रीं शिखायै वषट्' से शिखा का स्पर्श करे ।

'ॐ प्रत्यङ्गिरे कवचाय हुम्' से दोनों हाथों की भुजाओं का स्पर्श करे

'ॐ मां रक्ष रक्ष नेत्रत्रयाय वौषट्' से दोनों नेत्रों का स्पर्श करे ।

'ॐ मम शत्रून् भञ्जय भञ्जय अस्त्राय फट्' पढ़कर दाहिने हाथ की तर्जनी और मध्यमा अँगुली से बायें हाथ से ताली बजा देवे ।

दिग्बन्धः —

'ॐ भूर्भुवः स्वः' इति दिग्बन्धः मन्त्र पढ़कर सभी दिशाओं में चुटकी बजाये ।

मन्त्रः —

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं प्रत्यङ्गिरे मां रक्ष रक्ष मम शत्रून् भञ्जय भञ्जय फे हुँ फट् स्वाहा ।

यह भगवती प्रत्यङ्गिरा के जप का मन्त्र है । इसे कठस्थ कर लेना चाहिये, ताकि जप में कोई त्रुटि न हो । त्रुटि होने पर लाभ के बजाय हानि हो सकती है ।

अष्टोत्तरशतं चाऽस्य जपं चैव प्रकीर्तितम् ।
ऋषिस्तु भैरवो नाम छन्दोऽनष्टुप् प्रकीर्तितम् ।१।

देवता दैशिका रक्ता नाम प्रत्यङ्गिरेति च ।
पूर्वबीजैः षडङ्गानि कल्पयेत् साधकोत्तमः ।
सर्वहृष्टोपचारैश्च ध्यायेत् प्रत्यङ्गिरां शुभाम् ।२।

एक सौ आठ बार जप करे । इसके भैरव ऋषि हैं और अनुष्टुप् छन्द है तथा देवता दैशिका, रक्ता और प्रत्यंगिरा देवी हैं ॥१॥

साधक को चाहिए कि पूर्वोक्त बीज युक्त षडंगन्यास के साथ जप करे तथा प्रसन्नचित्त एवं यथोचित सामग्री से प्रत्यंगिरा देवी का इस प्रकार ध्यान करे ॥२॥

ध्यानम्

खड्गं कपालं डमरुं त्रिशूलं ।

सम्बिभ्रती चन्द्रकलावतंसा।

पिंगोर्ध्वकेशाऽसित् भीमदंष्ट्रा

भूयाद् विभूत्यै मम भद्रकाली ।३।

खड्ग, कपाल, डमरू तथा त्रिशूल को धारण करने वाली देवी भद्रकाली, जिनके मस्तक में चंद्रकला सुशोभित है, जिनके केश पीले एवं ऊपर को उठे हुए हैं तथा जिनके दाँत बड़े भयंकर एवं असित वर्ण के हैं, हमारा कल्याण करें ।३।

एवं ध्यात्वा जपेन्मन्त्रमेकविंशतिवासरान् ।
शत्रूणां नाशने ह्येतत् प्रकाशोऽयं सुनिश्चयः ।४।

अष्टम्यामर्धरात्रे तु शरत्काले महानिशि ।
आराधिता चेच्छ्रीकाली तत्क्षणात् सिद्धिदा नृणाम् ।५।

इस प्रकार ध्यान करके इक्कीस दिन तक '**ॐ ऐं ह्रीं श्रीं प्रत्यङ्गिरे मां रक्ष रक्ष मम शत्रून् भञ्जय भञ्जय फे हुं फट् स्वाहा**' इस मन्त्र का एक सौ आठ बार जप करे। शत्रुओं के नाश करने में यह मन्त्र निश्चित रूप से सिद्धिप्रद कहा गया है ॥४॥

शारदीय नवरात्र की महानिशा सम्बन्धित अष्टमी को अर्धरात्रि में श्री काली का आराधना करने से साधक को तत्क्षण सिद्धि प्राप्त होती है ॥५॥

सर्वोपचारसम्पन्न-वस्त्र-रत्न-फलादिभिः ।
पुष्पैश्च कृष्णवर्णैश्च साधयेत् कालिकां वराम्।६।
वर्षादूर्ध्वमजं मेषं मृदं वाऽथ यथाविधि ।
दद्यात् पूर्वं महेशानि ! ततश्च जपमाचरेत् ।७।
एकाहात् सिद्धिदा काली सत्यं सत्यं न संशयः।
मूलमन्त्रेण रात्रौ च होमं कुर्यात् समाहितः ।८।

साधक को चाहिए कि समस्त पूजन-सामग्री सहित वस्त्र, रत्न और फल आदि तथा कौआठोठी के कृष्ण वर्ण पुष्प से श्रेष्ठ श्रीकाली का पूजन करे ॥६॥

इस प्रकार एक वर्ष तक जप करने के पश्चात् भेड़ एवं बकरी के बच्चे की यथाविधि बलि प्रदान करे । उसके बाद पुनः जप करे ॥७॥

इस प्रकार करने से श्रीकाली एक दिन में ही निःसंदेह सिद्ध हो जाती हैं । रात्रि में अत्यन्त सावधन चित्त हो मूल मन्त्र से हवन करे ॥८॥

मरीच-लाजा-लवणैः सार्षपैर्मारणं भवेत्।
महावनपदे चैव न भयं विद्यते क्वचित् । ९।

प्रेतपिण्डं समादाय गोलकं कारयेत् ततः ।
मध्ये नामाङ्कितं कृत्वा शत्रुरूपांश्च पुत्तलीम् ।१०।

काली मिर्च, लावा, नमक और सरसों से हवन करने से शत्रु निश्चय ही मृत्यु को प्राप्त होता है और साधक को घनघोर जंगल में भी किसी प्रकार का भय नहीं रहता अर्थात् वह निर्भय रहता है ॥९॥

जिस पर मारण करना हो, उसके निमित्त प्रेत पिण्ड से गोलक यंत्र बना कर तथा उसमें शत्रु का पुतला बना कर, उसके मध्य में शत्रु का नाम लिखे तथा प्राणप्रतिष्ठा कर चिता की अग्नि में उसे हवन करे ॥१०॥

जीवं तत्र विधायेव चिताग्नौ जुहुयात् ततः।
तत्राऽयुतजपं कुर्यात् त्रिरात्रं मारणं रिपोः ।११।

महाज्वाला भवेत्तस्य तप्तताम्रशलाकया ।
गुदद्वारे प्रदद्याच्च सप्ताह्वान् मारणं रिपोः ।१२।

तीन दिन तक मूलमंत्र के दस हजार जप करने से शत्रु का मारण होता है तथा उस शत्रु को इस बात का ज्ञान होता है कि मुझे कोई तपे हुए ताँबे की शलाका (सलाई) से छेद रहा है और मेरे शरीर से भयंकर ज्वाला उत्पन्न हो रही है । इसी प्रकार उस पुत्तल के गुदा में सात दिन तक जप करने से शत्रु का मारण होता है ॥११-१२॥

प्रत्यङ्गिरा मया प्रोक्ता पठिता पाठितः नरैः ।
लिखित्वा च करे कण्ठे बाहौ शिरसि धारयेत् ।
मुच्यते सर्वपापेभ्यो नाऽल्पमृत्युः कथञ्चन ।१३।

ग्रहा ऋक्षास्तथा सिंहा भूता यक्षाश्च राक्षसाः ।
तस्य पीडां न कुर्वन्ति दिवि भुव्यन्तरिक्षगाः ।१४।

इस प्रत्यंगिरा (मन्त्र) को भोजपत्र पर लिख कर कलाई, कण्ठ, भुजा अथवा मस्तक पर धारण करे। जिससे साधक समस्त पापों से मुक्त होता है तथा अल्प मृत्यु का ग्रास कभी भी नहीं बनता ॥१३॥

इसको धारण करने से समस्त ग्रह, रीछ, सिंह, भूत, यक्ष, राक्षस और आकाश, पृथ्वी तथा अन्तरिक्ष में विचरण करने वाले समस्त गण उसे किसी प्रकार की पीड़ा नहीं पहुँचा सकते ॥१४॥

चतुष्पदेषु दुर्गेषु वनेषूपवनेषु च।
श्मशाने दुर्गमे घोरे सङ्ग्रामे शत्रुसङ्कटे।१५।

माला मन्त्र—

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ कुं कुं कुं मां सां खां चां लां क्षां ॐ ह्रीं ह्रीं ॐ ॐ ह्रीं वां धां मां सां रक्षां कुरु। ॐ ह्रीं ह्रीं ॐ सः हुं ॐ क्षौं वां लां धां मां सां रक्षां कुरु। ॐ ॐ हुं प्लुं रक्षां कुरु।

ॐ नमो विपरीतप्रत्यङ्गिरायै विद्याराज्ञि त्रैलोक्यवशङ्करि तुष्टि-पुष्टि-करि सर्वपीडा-पहारिणि सर्वापन्नाशिनि सर्वमङ्गलमाङ्गल्ये शिवे

वह चौराहा, किला, वन,उपवन, भयंकर श्मशान तथा घोर युद्ध एवं शत्रुओं से घिर जाने पर भी कभी दुःखी नहीं होता ॥१५॥ निम्न माला मन्त्र है।

सर्वार्थसाधिनि मोदिनि सर्वशास्त्राणां भेदिनि क्षोभिणि तथा परमन्त्र-तन्त्र-यन्त्र-विष-चूर्ण-सर्व - प्रयोगादीनन्येषां निर्वर्तयित्वा यत्कृतं तन्मेऽस्तु कलिपातिनि सर्वहिंसा मा कारयति अनुमोदयति मनसा वाचा कर्मणा ये देवाऽसुर-राक्षसास्तिर्यग्योनिसर्वहिंसका विरूपेकं कुर्वन्ति मम मन्त्र-तन्त्र-यन्त्र-विष-चूर्ण-सर्व-प्रयोगा-दीनात्महस्तेन यः करोति करिष्यति कारयिष्यति तान् सर्वान्येषां निवर्तयित्वा पातय कारय मस्तके स्वाहा ।

॥ इति भैरव तंत्रें भैरवी सम्वादे विपरीत-प्रत्यङ्गिरा विधानं समाप्तम् ॥

'**ॐ ॐ ॐ**' से '**मस्तके स्वाहा**' तक यह प्रधान माला मन्त्र है ।

॥ इति विपरीत प्रत्यङ्गिरास्तोत्र विधानं समाप्तम् ॥

विपरीत प्रत्यङ्गिरा स्तोत्रम्

महेश्वर उवाच

श्रृणु देवि ! महाविद्यां सर्वसिद्धिप्रदायिकाम्।
यस्य विज्ञानमात्रेण शत्रुवर्गा लयं गताः ।१।
विपरीतमहाकाली सर्वभूतभयङ्करी।
यस्याः प्रसङ्गमात्रेण कम्पते च जगत्त्रयम् ।२।

श्री महेश्वर शंकर जी ने कहा—हे देवि, सम्पूर्ण सिद्धियों को देने वाली महाविद्या के स्तोत्र को सुनो, जिसके जानने मात्र से ही शत्रुओं का विनाश हो जाता है ॥१॥ विपरीत महाकाली सम्पूर्ण प्राणियों को भय उत्पन्न करने वाली हैं। इनके स्मरण मात्र से ही तीनों लोक काँपने लगते हैं ॥२॥

न च शन्तिप्रदः कोऽपि परमेशो न चैव हि।
देवताः प्रलयं यान्ति किं पुनर्मानवादयः ।३।
पठनाद् धारणाद् देवि ! सृष्टिसंहारको भवेत्।
अभिचारादिकाः सर्वा या यासाध्यतमाः क्रिया।४।

परमेश्वर आदि कोई भी देवता उसे शान्त नहीं कर सकते । उसके सामने देवता भी विनष्ट हो जाते हैं । फिर मनुष्यों की बात ही क्या ? ॥३॥

मनुष्य महाविद्या-महाकाली के स्तोत्र को पढ़ने से सृष्टि के संहार करने में समर्थ हो जाता है । अभिचारादि (मारण, मोहन, उच्चाटन आदि) सारी क्रियाएँ इस स्तोत्र के स्मरण मात्र से नष्ट हो जाती हैं ॥४॥

सिद्धिविद्या महाकाली यत्रेवेह च मोदते।
सप्तलक्ष महाविद्या गोपिता परमेश्वरि! ।५।
महाकाली महादेवि! शङ्करश्रेष्ठदेवताः।
यस्याः प्रसादमात्रेण परब्रह्म महेश्वरः ।६।
कृत्तिमादि-विषघ्नीशा प्रलयादि निवर्त्तिका ।७।

सिद्धिविद्या महाकाली जिस स्थान पर आनन्दपूर्वक विहार करती हैं, वहाँ सात लाख महाविद्या गुप्त रूप से उनकी रक्षा करती हैं ॥५॥

हे महाकालि, हे महादेवि, आप शंकर की श्रेष्ठ देवता हो, आपकी प्रसन्नता मात्र से ही सदाशिव परब्रह्म हो गये ॥६॥

यह महाकाली कृत्तिमादि विषों का विनाश करने में समर्थ हैं तथा प्रलयादि को भी रोकने में सक्षम हैं ॥७॥

त्वदङ्घ्रिदर्शनादेव कम्पमानो महेश्वर।
यस्य निग्रहमात्रेण पृथिवी प्रलयं गता। ८।
दशविद्या यदा ज्ञाता दशद्वारसमाश्रिता।
प्राचीद्वारे भुवनेशी दक्षिणे कालिका तथा। ९।
नाक्षत्री पश्चिमे च उत्तरे भैरवी तथा।
ऐशान्यां सततं देवि! प्रचण्डचण्डिका तथा।१०।

भगवान महेश्वर तो आपके चरण के दर्शन मात्र से ही काँपने लगते हैं जिसके क्रोध करने मात्र से ही पृथिवी प्रलय को प्राप्त होने लगती है ॥८॥

देवियाँ इस महाकाली के दस द्वार पर रहने वाली दशविद्या के नाम से प्रख्यात है। पूर्व द्वार पर भुवनेशी, दक्षिण द्वार पर कालिका नाम की देवी रहती है ॥९॥

पश्चिम द्वार पर नाक्षत्री, उत्तर द्वार पर भैरवी, ईशान कोण में प्रचण्ड चण्डिका देवी रहती हैं ॥१०॥

आग्नेय्यां बगलादेवी नैऋत्ये मतङ्गिनी ।
धूमावती च वायव्ये अधे ऊर्ध्वे च सुन्दरी ।११।
सम्मुखे षोडशी देवी जाग्रत्-स्वप्न-स्वरूपिणी ।
वामभागे च देवेशी महात्रिपुरसुन्दरी ।१२।
अंशरूपेण देवेशि सर्वा देव्यः प्रतिष्ठिताः ।
महाप्रत्यङ्गिरा चैव प्रत्यङ्गिरा तथोदिता ।१३।

इस महाकाली के आग्नेय कोण में बगला देवी, नैऋत्य कोण में मतङ्गिनी, वायव्य में धूमावती, ऊपर तथा नीचे सुन्दरी नामक देवियाँ रहती हैं ॥११॥

जाग्रत, स्वप्न तथा सुषुस्ति स्वरूप वाली षोडशी देवी, सम्मुख में तथा वाम भाग में त्रिपुर सुन्दरी का निवास है ॥१२॥

महाकाली के अंशरूप से ये विद्याएँ प्रतिष्ठित (पूजित) हैं। यह महाकाली महाप्रत्यङ्गिरा तथा प्रत्यङ्गिरा नाम से विख्यात हैं ॥१३॥

महाविष्णुर्यदा ज्ञाता भुवनानां महेश्वरि।
कर्ता पाता च संहर्ता सत्यं सत्यं वदामि ते ।१४।
भुक्ति-मुक्तिप्रदा देवि ! महाकाली सुनिश्चितम् ।
वेदशास्त्र-प्रगुप्ता सा नन्दस्या देवतैरपि ।१५।
अनन्तकोटिसूर्याभा सर्वजन्तुभयङ्करी।
ध्यानज्ञानविहीना सा वेदान्तामृतवर्षिणी ।१६।

यह भगवती महाविष्णु रूप से लोकों का सृजन, पालन तथा संहार करती है, मैं यह सत्य-सत्य कहता हूँ ॥१४॥

यह महाकाली भुक्ति तथा मुक्ति को देने वाली हैं। वेदशास्त्रों की रक्षा करने वाली हैं तथा देवताओं को आनन्द देने वाली हैं ॥१५॥

अनन्त कोटि सूर्यों के समान तेजस्वी हैं । सारे प्राणियों को भय उत्पन्न करने वाली हैं, ध्यान तथा ज्ञान के बिना ही वेदान्तामृत की वर्षा करने वाली हैं ॥१६॥

सर्वमन्त्रमयी काली निगमाऽगमकारिणी।
निगमाऽगमकारी सा महाप्रलयकारिणी।१७।
यस्याऽङ्गधर्मलवा च सा गङ्गा परमोदिता।
महाकाली नगेऽनुस्था विपरीता महोदया।१८।
विपरीता प्रत्यङ्गिरा तत्र काली प्रतिष्ठिता।
साधकस्मरणमात्रेण शत्रूणां निगमागमाः।१९।
नाशं जग्मुः नशीं जग्मुः सत्यं सत्यं वदामि ते।
परब्रह्म महादेवी पूजनैरीश्वरो भवेत्।२०।

यह महाकाली सभी मन्त्रों का स्वरूप हैं तथा निगम (वेद), आगम (मन्त्र शास्त्र) की रचयिता हैं तथा महाप्रलय करने वाली हैं ॥१७॥

जिसके अंग के स्वेद (पसीना) मात्र से गङ्गा प्रवाहित हैं तथा जो पर्वतराज पर विद्यमान पार्वती के रूप में विपरीत प्रत्यङ्गिरा काली कही जाती हैं। साधक के स्मरण मात्र से ही शत्रुओं के निगम, आगम नष्ट हो जाते हैं, मैं यह सत्य-सत्य कहता हूँ। महादेवी के पूजन से मनुष्य सर्व-समर्थ होकर परब्रह्म रूप हो जाता है ॥१८-२०॥

शिवकोटिसमो योगी विष्णुकोटिसमः स्थिरः ।
सर्वैराराधिता सा वै भुक्ति-मुक्तिप्रदायिनी ।२१
गुरुमन्त्रशतं जप्त्वा श्वेतसर्षपमानयेत् ।२२।

ॐ हुं स्फारय स्फारय मारय मारय शत्रुवर्गान् नाशय नाशय स्वाहा । इति विंशाक्षरी मन्त्रः ।

·करोड़ों शिव के समान योगी तथा करोड़ों विष्णु के समान स्थिर हो जाता है । आराधना से प्रसन्न होकर वह भोग तथा मोक्ष की देने वाली हैं । गुरु मन्त्र का सौ बार जप कर श्वेत सर्षप (सफेद सरसों) ले आना चाहिए ।।२१-२२।।

आत्मरक्षां शत्रुनाशं सा करोति च तत्क्षणात्।
ऋषिन्यासादिकं कृत्वा सर्षपैर्मारणं चरेत् ।२३।

विनियोगः–**ॐ अस्य श्रीमहाविपरीत प्रत्यङ्गिरास्तोत्र मन्त्रस्य महाकालभैरव ऋषिस्त्रिष्टुप्छन्दः श्रीमहाविपरीतप्रत्यङ्गिरादेवता, हं बीजं, ह्रीं शक्तिः, क्लीं कीलकं, मम सर्वार्थ सिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः ।**

'ॐ हुं स्फारय-स्फारय मारय-मारय शत्रुवर्गान नाशय-नाशय स्वाहा' यह विंशाक्षरी मन्त्र है । इसके जप से भगवती महाकाली उसी क्षण साधक की रक्षा तथा शत्रुओं का नाश करती हैं । यदि मारण करना हो, तो ऋष्यादिन्यास कर श्वेत सरसों का प्रयोग करना चाहिए ।।२३।।

विनियोग– हाथ में जल लेकर, **'ॐ अस्य श्रीमहा-विपरीत-प्रत्यङ्गिरा स्तोत्र-मन्त्रस्य'** से आरम्भ कर **'जपे विनियोगः'** तक मन्त्र पढ़ कर भूमि पर जल छोड़ दे ।

मालामन्त्र:

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ नमो विपरीत-प्रत्यङ्गिरायै सहस्रानेककार्यलोचनायै कोटि विद्युज्जिह्वायै महाव्यापिन्यै संहाररूपायै जन्मशान्तिकारिण्यै मम सपरिवारकस्य भावि-भूत-भवच्छत्रु-दारापत्यान् संहारय संहारय महाप्रभावं दर्शय दर्शय हिलि हिलि किलि किलि मिलि मिलि चिलि चिलि भूरि भूरि विद्युज्जिह्वे ज्वल ज्वल प्रज्वल प्रज्वल ध्वंसय ध्वंसय प्रध्वंसय प्रध्वंसय ग्रासय ग्रासय पिब पिब नाशय नाशय त्रासय त्रासय वित्रासय

यह '**ॐ ॐ–नमो विपरीत प्रत्यङ्गिरायै**' से लेकर '**हूँ फट् स्वाहा**' तक प्रत्यङ्गिरा का माला मन्त्र है।

वित्रासय मारय मारय विमारय विमारय भ्रामय भ्रामय विभ्रामय विभ्रामय द्रावय द्रावय विद्रावय विद्रावय हूँ हूँ फट् स्वाहा ।

हूँ हूँ हूँ हूँ हूँ ह्लीं ह्लीं ह्लीं ह्लीं ह्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ विपरीतप्रत्यङ्गिरे हूँ लँ ह्लीं लँ क्लीं लँ ॐ लँ फट् फट् स्वाहा ।

हूँ लँ ह्लीं क्लीं ॐ विपरीतप्रत्यङ्गिरे मम सपरिवारकस्य यावच्छत्रून् देवता-पितृ-पिशाच-नाग-गरुड-किन्नर-विद्याधर-गन्धर्व-यक्ष-राक्षस-लोकपालान् ग्रह-भूत-नर-लोकान् समन्त्रान् सौषधान् सायुधान् स-सहायान् पाणौ छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि निकृन्तय निकृन्तय

छेदय छेदय उच्चाटय उच्चाटय मारय मारय तेषां साहङ्कारादिधर्मान् कीलय कीलय घातय घातय नाशय नाशय विपरीतप्रत्यङ्गिरे स्फ्रें स्फ्रेंत्कारिणी ॐ ॐ जँ ॐ ॐ जँ ॐ ॐ जँ ॐ ॐ जँ ॐ ॐ जँ ॐ ठः ॐ ठः ॐ ठः ॐ ठः ॐ ठः मम सपरिवारकस्य शत्रूणां सर्वाः विद्याः स्तम्भय स्तम्भय नाशय नाशय हस्तौ स्तम्भय स्तम्भय मुखं स्तम्भय स्तम्भय नाशय नाशय नेत्राणि स्तम्भय स्तम्भय नाशय नाशय दन्तान् स्तम्भय स्तम्भय नाशय नाशय जिह्वां स्तम्भय स्तम्भय नाशय नाशय पादौ स्तम्भय स्तम्भय नाशय नाशय गुह्यं स्तम्भय स्तम्भय नाशय नाशय सुकुटुम्बानां स्तम्भय स्तम्भय नाशय नाशय स्थानं स्तम्भय स्तम्भय

नाशय नाशय सँ प्राणान् कीलय कीलय नाशय नाशय हूं हूं हूं हूं हूं हूं हूं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं ऐं ऐं ऐं ऐं ऐं ऐं ऐं ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ फट् फट् स्वाहा ।

मम सपरिवारकस्य सर्वतो रक्षां कुरु कुरु फट् फट् स्वाहा (ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं) ऐं हूं ह्रीं क्लीं हूं सों विपरीतप्रत्यङ्गिरे ! मम सपरिवारकस्य भूतभविष्य-च्छत्रूणामुच्चाटनं कुरु कुरु हूं हूं फट् स्वाहा ।

ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं वं वं वं वं वं लं लं लं लं लं रं रं रं रं रं यं यं यं यं यं ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ नमो भगवति विपरीतप्रत्यङ्गिरे दुष्ट-चाण्डालिनी-त्रिशूल-वज्राङ्कुश-शक्ति-शूल-धनुः-शर-

पाशधरिणी शत्रुरुधिर-चर्म-मेदो-मांसाऽस्थि-मज्जाशुक्र-मेहन-वसा-वाक्-प्राण-मस्तक-हेत्वादिभक्षिणी परब्रह्मशिवे ज्वालादायिनी-मालिनी शत्रूच्चाटन-मारण-क्षोभन-स्तम्भन-मोहन-द्रावण-जृम्भण-भ्रामण-रौद्रण-सन्तापन-यन्त्र-मन्त्र-तन्त्रान्तर्याग-पुरश्चरण-भूतशुद्धि-पूजाफल-परम-निर्वाण-हारण-कारिणि कपालखट्वाङ्ग-परशुधारिणि मम सपरिवारकस्य भूतभविष्यच्छत्रून् स-सहायान् सवाहनान् हन हन रण रण दह दह दम दम धम धम पच पच मथ मथ लङ्घय लङ्घय खादय खादय चर्वय चर्वय व्यथय व्यथय ज्वरय ज्वरय मूकान् कुरु कुरु ज्ञानं हर हर हूं हूं फट् स्वाहा।

ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं हूं हूं हूं हूं हूं हूं

हूं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ विपरीतप्रत्यङ्गिरे ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं हूं हूं हूं हूं हूं हूं हूं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ फट् फट् स्वाहा ।

मम सपरिवारकस्य कृतमन्त्र-यन्त्र-तन्त्र-हवन - कृतौषध - विषचूर्ण - शस्त्राद्यभिचार-सर्वोपद्रवादिकं येन कृतं कारितं कुरुते करिष्यति वा तान् सर्वान् हन हन स्फारय स्फारय सर्वतो रक्षां कुरु कुरु हूं हूं फट् फट् स्वाहा ।

हूं हूं हूं हूं हूं हूं हूं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ फट् फट् स्वाहा ।

ॐ हूं ह्रीं क्लीं ॐ अं विपरीत प्रत्यङ्गिरे

मम सपरिवारकस्य शत्रवः कुर्वन्ति करिष्यन्ति शत्रुश्च कारयामास कारयन्ति कारयिष्यन्ति याऽन्यां कृत्यान्तैः सार्धं तांस्तां विपरीतां कुरु कुरु नाशय नाशय मारय मारय श्मशानस्थानं कुरु कुरु कृत्यादिकां क्रियां भावि-भूत-भवच्छत्रूणां यावत्कृत्यादिकां क्रियां विपरीतां कुरु कुरु तान् डाकिनीमुखे हारय हारय भीषय भीषय त्रासय त्रासय परम-शमनरूपेण हन हन धर्मावच्छिन्न-निर्वाणं हर हर तेषाम् इष्टदेवानां शासय शासय क्षोभय क्षोभय प्राणादि-मनोबुद्ध्यऽहङ्कार - क्षुत्तृष्णा - कर्षण-लयन-आवागमन-मरणादिकं नाशय नाशय हूं हूं ह्रीं ह्रीं क्लीं क्लीं ॐ ॐ फट् फट् स्वाहा ।

क्षँ लँ हँ सँ षँ शँ वँ लँ रँ यँ मँ भँ वँ फँ पँ नँ धँ दँ थँ तँ णँ ढँ डँ ठँ टँ ञँ झँ जँ छँ चँ ङँ घँ गँ खँ कँ अः अँ औं ओं ऐं एँ लॄँ लृँ ॠं ऋं ऊँ उँ ईं इं आँ अँ हूं हूं हूं हूं हूं हूं हूं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ विपरीतप्रत्यङ्गिरे हूं हूं हूं हूं हूं हूं हूं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ फट् स्वाहा ।

क्षं लं हं सं षं शं वं लं रं यं म भं बं फं पं नं धं दं थं तं णं ढं डं ठं टं ञं झं जं छं चं ङं घं गं खं कं अः अं औं ओं ऐं एं लॄं लृं ॠँ ऋं ऊं उं ईं इं आँ अं हूं हूं हूं हूं हूं हूं हूं ह्रीं ह्रीं

ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ फट् फट् स्वाहा ।

अः अं औं ओं ऐं एं लॄं लृं ॠं ऋं ऊं उं ईं इं आँ अं ङं घं गं खं कं ञं झं जं छं चं णं ढं डं ठं टं नं धं दं थं तं मं भं बं फं पं क्षं लं हं सं षं शं वं लं रं यं ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ सपरिवारकस्य स्थाने शत्रूणां कृत्यान् सर्वान् विपरीतान् कुरु कुरु तेषां तन्त्र-मन्त्र-तन्त्रार्चन-श्मशानारोहण- भूमिस्थापन-भस्म-प्रक्षेपण-पुरश्चरण-होमाभिषेकादिकान् कृत्यान् दूरी कुरु कुरु हूं विपरीतप्रत्यङ्गिरे मां सपरिवारकं सर्वतः सर्वेभ्यो रक्ष रक्ष हूँ ह्रीं फट् स्वाहा ।

अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं लृं लॄं एं ऐं ओं औं अं अः कं खं गं घं ङं चं छं जं झं ञं टं ठं डं ढं णं तं थं दं धं नं पं फं बं भं मं यं रं लं वं शं षं सं हं ळं क्षं ॐ क्लीं ह्रीं श्रीं ॐ क्लीं ह्रीं श्रीं ॐ क्लीं ह्रीं श्रीं ॐ क्लीं ह्रीं श्रीं ॐ क्लीं ह्रीं श्रीं ॐ हूं ह्रीं क्लीं ॐ विपरीत-प्रत्यङ्गिरे हूँ ह्रीं क्लीं ॐ फट् स्वाहा ।

ॐ क्लीं ह्रीं श्रीं ॐ क्लीं ह्रीं श्रीं ॐ क्लीं ह्रीं श्रीं ॐ क्लीं ह्रीं श्रीं ॐ क्लीं ह्रीं श्रीं अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं लृं लॄं एं ऐं ओं औं अं अः कं खं गं घं ङं चं छं जं झं ञं टं ठं डं ढं णं तं थं दं धं नं पं फं बं भं मं यं रं लं वं शं षं सं हं ळं क्षं विपरीतप्रत्यङ्गिरे मम

सपरिवारकस्य शत्रूणां विपरीतक्रियां नाशय नाशय त्रुटिं कुरु कुरु तेषामिष्टदेवतादि विनाशं कुरु कुरु सिद्धिम् अपनय-अपनय विपरीत-प्रत्यङ्गिरे शत्रुमर्दिनि भयङ्करि नाना-कृत्यामर्दिनि ज्वालिनि महाघोरतरे त्रिभुवन-भयङ्करि शत्रूणां मम सपरिवारकस्य चक्षुः-श्रोत्राणि पादौ सर्वतः सर्वेभ्यः सर्वदा रक्षां कुरु कुरु स्वाहा ।

श्रीं ह्रीं ऐं ॐ वसुन्धरे मम सपरिवारकस्य स्थानं रक्ष रक्ष हूं फट् स्वाहा । श्रीं ह्रीं ऐं ॐ महालक्ष्मि मम सपरिवारकस्य पादौ रक्ष रक्ष हूँ फट् स्वाहा । श्रीं ह्रीं ऐं ॐ चण्डिके मम सपरिवारकस्य जङ्घे रक्ष रक्ष हूँ फट् स्वाहा । श्रीं ह्रीं ऐं ॐ चामुण्डे मम सपरिवारकस्य गुह्यं रक्ष रक्ष हूँ फट् स्वाहा ।

श्रीं ह्रीं ऐं ॐ इन्द्राणि मम सपरिवारकस्य नाभिं रक्ष रक्ष हूं फट् स्वाहा। श्रीं ह्रीं ऐं ॐ नारसिंहि मम सपरिवारकस्य बाहूं रक्ष रक्ष हूँ फट् स्वाहा। श्रीं ह्रीं ऐं ॐ वाराहि मम सपरिवारकस्य हृदयं रक्ष रक्ष हूँ फट् स्वाहा। श्रीं ह्रीं ऐं ॐ वैष्णवि मम सपरिवारकस्य कण्ठं रक्ष रक्ष हूँ फट् स्वाहा। श्रीं ह्रीं ऐं ॐ कौमारि मम सपरिवारकस्य वक्त्रं रक्ष रक्ष हूँ फट् स्वाहा। श्रीं ह्रीं ऐं ॐ माहेश्वरि मम सपरिवारकस्य नेत्रे रक्ष रक्ष हूँ फट् स्वाहा। श्रीं ह्रीं ऐं ॐ ब्रह्माणि मम सपरिवारकस्य शिरो रक्ष रक्ष हूँ फट् स्वाहा। हूँ ह्रीं क्लीं ॐ विपरीतप्रत्याङ्गिरे मम सपरिवारकस्य छिद्रं सर्वगात्राणि रक्ष रक्ष हूँ फट् स्वाहा।

सन्तापिनी संहारिणी रौद्री च भ्रामिणी तथा।
जृम्भिणी द्राविणी चैव क्षोभिणी मोहिनी ततः ।२४।

स्तम्भिनी चांऽशरूपास्ताः शत्रुपक्षे नियोजिताः ।
प्रेरिताः साधकेन्द्रेण दुष्टशत्रुप्रमर्दिकाः ।२५।

---

१. सन्तापिनी, २. संहारिणी, ३. रौद्री, ४. भ्रामिणी, ५. जृम्भिणी, ६. द्राविणी, ७. क्षोभिणी, ८. मोहिनी, ९. स्तम्भिनी— यह नव महाविद्याएँ साधक की प्रेरणा से शत्रुपक्ष में अंश रूप से नियोजित होने पर समस्त दुष्ट शत्रुओं का संहार करती हैं ॥२४-२५॥

ये नीचे लिखे नव महाविद्याओं के मन्त्र हैं ।

१. ॐ सन्तापिनि स्फ्रें स्फ्रें मम सपरिवारकस्य शत्रून् रौद्रय रौद्रय हूँ फट् स्वाहा ।

२. ॐ संहारिणि स्फ्रें स्फ्रें मम सपरिवारकस्य शत्रून् संहारय संहारय हूँ फट् स्वाहा ।
३. ॐ रौद्रि स्फ्रें स्फ्रें मम सपरिवारकस्य शत्रून् रौद्रय रौद्रय हूँ फट् स्वाहा ।
४. ॐ भ्रामिणि स्फ्रें स्फ्रें मम सपरिवारकस्य शत्रून् भ्रामय भ्रामय हूँ फट् स्वाहा ।
५. ॐ जृम्भिणि स्फ्रें स्फ्रें मम सपरिवारकस्य शत्रून् जृम्भय जृम्भय हूँ फट् स्वाहा ।
६. ॐ द्राविणि स्फ्रें स्फ्रें मम सपरिवारकस्य शत्रून् द्रावय द्रावय हूँ फट् स्वाहा।
७. ॐ क्षोभिणि स्फ्रें स्फ्रें मम सपरिवारकस्य शत्रून् क्षोभय क्षोभय हूँ फट् स्वाहा ।
८. ॐ मोहिनि स्फ्रें स्फ्रें मम सपरिवारकस्य शत्रून् मोहय मोहय हूँ फट् स्वाहा।
९. ॐ स्तम्भिनि स्फ्रें स्फ्रें मम सपरिवारकस्य शत्रून् स्तम्भय स्तम्भय हूँ फट् स्वाहा ।

फलश्रुतिः —

वृणोति य इमां विद्यां शृणोति च सदाऽपि ताम्।
यावत्कृत्यादि शत्रूणां तत्क्षणादेव नश्यति।१।

मारणं शत्रुवर्गाणां रक्षणाय चात्मनं परम्।
आयुर्वृद्धि-र्यशोवृद्धिस्तेजोवृद्धिस्तथैव च।२।

फलश्रुति— जो लोग इस महाविद्या को सदैव वरण तथा श्रवण करते हैं, उसी समय से उनके शत्रुओं के समस्त प्रयत्न निष्फल हो जाते हैं ॥१॥

यह स्तोत्र या मन्त्र शत्रुवर्गों को मारने वाला है तथा साधक की रक्षा करता है । साधक की आयु की वृद्धि, यश की वृद्धि तथा तेज की वृद्धि होती है ॥२॥

कुबेर इव वित्ताढ्यः सर्वसौख्यमवाप्नुयात्।
वाय्वादीनामुपशमं विषमज्वर नाशनम्।३।
परवित्तहरा सा वै परप्राणहरा तथा।
परक्षोभादिककरा तथा सम्पत्करा शुभा।४।
स्मृतिमात्रेण देवेशि! शत्रुवर्गा लयं गताः।
इदं सत्यमिदं सत्यं दुर्लभा दैवतैरपि।५।

इस मन्त्र तथा स्तोत्र का जप करने वाला कुबेर के समान धनवान् होकर सारे सुखों को प्राप्त करता है। इस मन्त्र के जप से वायुरोग तथा विषम ज्वर नाश हो जाता है ॥३॥ यह स्तोत्र शत्रुओं के धन तथा प्राण का अपहरण करने वाला है, तथा शत्रुवर्ग के अन्तःकरण में क्षोभ (क्लेश) पैदा कर साधक को सम्पत्ति प्रदान करता है ॥४॥ हे देवेशि, इस स्तोत्र के स्मरण मात्र से ही शत्रुवर्ग नष्ट हो जाते हैं—यह सत्य है, यह सत्य है। ये स्तोत्र देवताओं को भी दुर्लभ है ॥५॥

शठाय परशिष्याय न प्रकाश्या कदाचन।
पुत्राय भक्तियुक्ताय स्वशिष्याय तपस्विने ।
प्रदातव्या महाविद्या चात्मवर्गप्रदा यतः ।६।
विना ध्यानैर्विना जापैर्विना पूजा विधानतः ।
विना षोढा विना ज्ञानैर्मोक्षसिद्धिः प्रजायते ।७।

शठ (मूर्ख) तथा दूसरे से दीक्षा लेने वाले शिष्य को यह विद्या नहीं देनी चाहिए । यह विद्या केवल अपने पुत्र तथा भक्ति से युक्त अपने शिष्य और तपस्वी को ही देनी चाहिए, क्योंकि इस विद्या को आत्मवर्ग में ही देने का विधान है ।।६।।

यह विद्या, ध्यान, जप, पूजा, सेवा तथा ज्ञान के बिना ही मोक्ष सिद्धि को देने वाली है ।।७।।

परनारीहरा विद्या पररूपहरा तथा ।
वायुचन्द्रस्तम्भकरा मैथुनानन्दसंयुता । ८।
त्रिसन्ध्यमेकसन्ध्यं वा यः पठेत् भक्तितः सदा ।
सत्यं वदामि देवेशि मम कोटिसमो भवेत् । ९।
क्रोधादेव गणाः सर्वे लयं यास्यन्ति निश्चितम् ।
किं पुनर्मानवा देवि ! भूतप्रेतादयो मृताः ।१०।

यह विद्या शत्रुवर्ग के नारी तथा रूप का अपहरण करने वाली है तथा वायु, सूर्य एवं चन्द्रमा की गति को स्तम्भित करने वाली है, और मैथुन के समान आनन्द देने वाली है ।।८।। जो लोग तीनों संध्या में अथवा एक संध्या में भक्तिपूर्वक इस स्तोत्र का पाठ करते हैं हे देवेशि, मैं सत्य कहता हूँ कि, वे लोग मुझसे करोड़ों गुना अधिक हैं ।।९।। उस मनुष्य के क्रोध मात्र से मेरे गण नष्ट हो जाते हैं । फिर मनुष्यों की बात ही क्या ? और भूत-प्रेतादि तो मरे हुए ही हैं ।।१०।।

विपरीता समा विद्या न भूता न भविष्यति।
पठनान्ते परब्रह्म विद्या सभास्करा तथा।
मातृकां पुटितं देवि ! दशधा प्रजपेत सुधीः ।११।
वेदादिपुटिका देवि ! मातृकानन्तरूपिणि।
तथा हि पुटितां विद्यां प्रजपेत् साधकोत्तमः ।१२।

इस विपरीत प्रत्यङ्गिरा महाविद्या के समान आज तक न कोई विद्या हुई है और न होगी। सूर्य के समान तेजस्विनी इस महाविद्या के पाठ मात्र से ही मनुष्य परब्रह्म के समान समर्थ हो जाता हैं ॥११॥

भगवान शङ्कर पार्वती से कहते हैं कि, हे देवि ! मातृका से सम्पुट कर इस महाविद्या के साधक को दस बार पाठ करना चाहिए। हे अनन्तरूपिणी मातृके ! तुम वेदादि से सम्पुटित हो। इस प्रकार साधक को सम्पुटित कर प्रत्यङ्गिरा स्तोत्र का पाठ करना चाहिए ॥१२॥ मातृका विद्या इस स्तोत्र में निम्न प्रकार से निर्दिष्ट हैं।

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ अँ आँ इँ ईँ उँ ऊँ ऋँ ॠँ लृँ ॡँ एँ ऐँ ओं औं अँ अः कँ खँ गँ घँ ङँ चँ छँ जँ झँ ञँ टँ ठँ डँ ढँ णँ तँ थँ दँ धँ नँ पँ फँ बँ भँ मँ यँ रँ लँ वँ शँ षँ सँ हँ लँ क्षँ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ विपरीत-परब्रह्ममहाप्रत्यङ्गिरे ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ अँ आँ इँ ईँ उँ ऊँ ऋँ ॠँ लृँ ॡँ एँ ऐं ओं औं अँ अः कँ खँ गँ घँ ङँ चँ छँ जँ झँ ञँ टँ ठँ डँ ढँ णँ तँ थँ दँ धँ नँ पँ फँ बँ भँ मँ यँ रँ लँ वँ शँ षँ सँ हँ लँ क्षँ मम सपरिवारकस्य सर्वेभ्यः सर्वतः सर्वदा रक्षां कुरु कुरु मरण- भयापन-पापनय- त्रिजगतां पररूपवित्तायुर्मे सपरिवार-काय देहि देहि दापय दापय साधकत्वं प्रभुत्वं च सततं देहि देहि विश्वरूपे धनं पुत्रान् देहि देहि

मां सपरिवारकस्य मां पश्येत्तु देहिनः सर्वे हिंसकाः प्रलयं यान्तु मम सपरिवारकस्य शत्रूणां बलबुद्धिहानिं कुरु कुरु तान् स-सहायान् स्वेष्टदेवतान् संहारय संहारय स्वाचारमपनयाऽपनय ब्रह्मास्त्रादीनि व्यर्थी कुरु हूं हूं स्फ्रें स्फ्रें ठः ठः फट् फट् ॐ ।

मनोजित्वा जपेल्लोकं भोगं रोगं तथा यजेत्।
दीनतां हीनतां जित्वा कामिनीं निर्वाणपद्धतिम् ।१३।

साधक अपने मन को वश में कर तथा दीनता एवं हीनता का परित्याग कर भोग, रोग, कामिनी तथा मोक्ष को भगवती के निमित्त अर्पण कर इस स्तोत्र का पाठ तथा जप करे ॥१३॥

॥ इति विपरीत प्रत्यङ्गिरास्तोत्रं समाप्तम् ॥

कालीकर्पूर स्तोत्रम्

कर्पूरं मध्यमान्त्य स्वरपर - रहितं सेन्दुवामाक्षियुक्तं,
बीजं ते मातरेतत् त्रिपुरहरवधुं त्रिष्कृतं ये जपन्ति।
तेषां गद्यानि पद्यानि च मुखकुहरादुल्लसन्त्येववाचः,
स्वच्छन्दं-ध्वान्तधाराधर-रुचिरुचिरे सर्वसिद्धिं गतानाम्।।१।।

ईशानः सेन्दु वाम-श्रवण-परिगतो बीजमन्यन्महेशि,
द्वन्द्वं ते मन्दचेता यदि जपति जनो वारमेकं कदाचित्।
जित्वा वाचामधीशं धनदमपि चिरं मोहयन्नम्बुजाक्षी-
वृन्दं चन्द्रार्द्धचूडे प्रभवति स महाघोररावावतंसे[1] ।।२।।

---

१. टिप्पणी– यह स्तोत्र देवी का ही एक स्वरूप है। अर्द्धरात्रि के समय या पूजाकाल में इसके पाठ से साधक को कवित्व शक्ति उत्पन्न हो जाती है, शत्रु भयभीत रहते हैं। कामिनियाँ वशीभूत हो जाती हैं। उसे कोई भी भय प्राप्त नहीं होता।

ईशो वैश्वानरस्थः शशधर-विलसद्वामनेत्रेण युक्तं,
बीजं ते द्वन्द्वमन्यद् -विगलित-चिकुरे कालिके ये जपन्ति।
द्वेष्टारं ते निहन्ति त्रिभुवनमसिते वश्यभावं नयन्ति,
सृक्क-द्वन्द्वास्त्रधारा-द्वयधरवदने दक्षिणेकालिकेति।।३।।

ऊर्ध्वं वामे कृपाणं करतलकमले छिन्नमुण्डं तथाऽधः,
सव्ये भीतं वरं च त्रिजगदघहरे दक्षिणे कालिके च।
जप्त्वैतन्नामवर्णं तव मनुविभवं भावयन्तस्तदर्थं,
तेषामष्टौ करस्थाः प्रकटितवदने सिद्धयस्त्र्यम्बकस्य।।४।।

वर्गाद्यं वह्निसंस्थं विधुरति-ललितं तत्त्रयं कूर्चयुग्मं,
लज्जाद्वन्द्वं च पश्चात् स्मितमुखि तदधष्ठ-द्वयं योजयित्वा।
मातर्ये वा जपन्ति स्मरहरमहिले भावयं ते स्वरूपं,
ते लक्ष्मीलास्यलीला-कमलदृशः कामरूपा भवन्ति।।५।।

प्रत्येकं वा द्वयं वा त्रयमपि च परं बीजमत्यन्तगुह्यं,
त्वन्नाम्ना योजयित्वा सकलमपि सदा भावयन्तो जपन्ति।
तेषां नेत्रारविन्दे विहरति कमला वक्त्रशुभ्रांशुबिम्बे,
वाग्देवीदिव्यमुण्ड-स्रगतिशयलसत्कण्ठपीनस्तनाढ्ये।।६।।

गतासूनां बाहु प्रकरकृतकाञ्ची परिलसन्
नितम्बां दिग्वस्त्रां त्रिभुवनविधात्रीं त्रिनयनाम्।
श्मशानस्थे तल्पे शवहृदि महाकालसुरत प्रसक्तां
त्वां ध्यायन् जननि ! जडचेता अपि कविः ।।७।।

शिवाभिर्घोराभिः शव-निवह-मुण्डास्थि-निकरैः
परं सङ्कीर्णायां प्रकटितचितायां हरवधूम्।
प्रविष्टां सन्तुष्टामुपरि सुरते नाऽति युवतीं
सदा त्वां ध्यायन्ति क्वचिदपि न तेषां परिभवः ।।८।।

वदामस्ते किं वा जननि वयमुच्चैर्जडधियो
न धाता नापीशो हरिरपि न ते वेत्ति परमम्।
तथाऽपि त्वद्भक्तिर्मुखरयति चाऽस्माकमसिते
तदेतत् क्षन्तव्यो न खलु पशुरोषः समुचितः ।।९।।

समन्तादापीन-स्तन-जघन धृग् यौवन-वती-
रतासक्तो नक्तं यदि जपति भक्तस्तव मनुम्।
विवासास्त्वां ध्यायन् गलितचिकुरस्तस्य वशगाः
समस्ताः सिद्धौगा भुवि चिरतरं जीवति कविः ।।१०।।

समः स्वस्थीभूतो जपति विपरीतोऽपि स सदा
विचिन्त्य त्वां ध्यायन्नतिशय-महाकालसुरताम्।
तदा तस्य क्षोणीतलविहरमाणस्य विदुषः
कराम्भोजे वश्याः स्मरहरवधू सिद्धिनिवहाः ॥११॥

प्रसूते संसारं जननि जगतीं पालयति वा
समस्तं क्षित्यादि प्रलयसमये संहरति च।
अतस्त्वं धाताऽपि त्रिभुवनपतिः श्रीपतिरपि
महेशोऽपि प्रायः सकलमपि किं स्तौमि भवतीम् ॥१२॥

अनेके सेवन्ते भवदधिक-गीर्वाणनिवहा
विमूढास्ते मातः! किमपि न हि जानन्ति परमम्।
समाराध्यामाद्यां हरि-हर-विरञ्च्यादि-विबुधैः
प्रपन्नोऽस्मि स्वैरं रतिरसमहानन्दनिरताम् ॥१३॥

धरित्री कीलालं शुचिरपि समीरोऽपि गगनं
त्वमेका कल्याणी गिरिशरमणी कालि सकलम्।
स्तुतिः का ते मातर्निजकरुणया मामगतिकं
प्रसन्ना त्वं भूया भवमनु न भूयान्मम जनुः ॥१४॥

श्मशानस्थः स्वस्थो गलितचिकुरो दिक्पटधरः
सहस्त्रं त्वर्काणां निजगलित-वीर्येण कुसुमम्।
जपंस्त्वत्प्रत्येकं मनुमपि तव ध्याननिरतो
महाकालि स्वैरं स भवति धरित्रीपरिदृढः ॥१५॥

गृहे सम्मार्जन्या परिगलितवीर्यं हि चिकुरं
समूलं मध्याह्ने वितरति चितायां कुजदिने।
समुच्चार्य प्रेम्णा मनुमपि सकृत्कालि सततं
गजारूढो याति क्षितिपरिवृढः सत्कविवरः ॥१६॥

स्वपुष्पैराकीर्णं कुसुमधनुषो मन्दिरमहो
पुरो ध्यायन् ध्यायन् जपति यदि भक्तस्तव मनुम्।
स गन्धर्वश्रेणीपतिरपि कवित्वामृतनदी-
नदीनः पर्यन्ते परमपदलीनः प्रभवति ॥१७॥

त्रिपञ्चारे पीठे शवशिवहृदि स्मेरवदनां
महाकालेनोच्चैर्मदनरस - लावण्य - निरताम्।
समासक्तो नक्तं स्वयमपि रतानन्दनिरतो
जनो योध्यायेत्त्वामपि जननि स स्यात् स्मरहरः ॥१८॥

सलोमास्थि स्वैरं पललमपि मार्जारमसिते
परं चोष्ट्रं मेषं नर-महिषयोश्छागमपि वा।
बलिं ते पूजायामपि वितरतां मर्त्यमसतां
सतां सिद्धिः सर्वा प्रतिपदमपूर्वा प्रभवति ।।१९।।
वशी लक्षं मन्त्रं प्रजपति हविष्याशनरतो
दिवा मातर्युष्मच्चरण - युगलध्यान - निरतः ।
परं नक्तं नग्नो निधुवनविनोदेन च मनं
जनो लक्षं सम्यक्स्मरहरसमानः क्षितितले ।।२०।।
इदं स्तोत्रं मातस्तव मनुसमुद्धारणजप-
स्वरूपाख्यं पादाम्बुज-युगलपूजाविधियुतम् ।
निशार्द्धे वा पूजासमयमधि वा यस्तु पठति
प्रलापस्तस्याऽपि प्रसरति कवित्वामृतरसः ।।२१।।
कुरङ्गाक्षीवृन्दं तमनुसरति प्रेमतरलं
वशस्तस्य क्षोणीपतिरपि कुबेरप्रतिनिधिः ।
रिपुः कारागारं कलयति च तत्केलिकलया
चिरं जीवन्मुक्तः स भवति सुभक्तः प्रतिजनुः ।।२२।।

।। इति श्रीमहाकालविरचितं काली कर्पूरस्तोत्रं समाप्तम् ।।

अथ श्री काली प्रत्यङ्गिरा

श्री देव्युवाचः —

कथयेशान ! सर्वज्ञ ! यतोऽहं तव वल्लभा ।
या प्रोक्ता त्वया नाथ ! सिद्ध विद्या पुरा दश ।।
तासां प्रत्यगिराख्यं तु कवचं चैकशः परम् ।।

श्री शिव उवाचः —

शृणु प्रिये ! प्रवक्ष्यामि गुह्याद् गुह्यतरं परम् ।
बिना येन न सिध्यन्ति मंत्राः कोटि क्रियान्विता ।।
प्रत्यंग रक्षण - करी तेन प्रत्यंगिरा मता ।
काली प्रत्यंगिरा वक्ष्ये श्रृणुष्वावहितानघे ।।

श्री देव्युवाचः —

प्रभो ! प्रत्यंगिरा-विद्या सर्व विद्योत्तमा स्मृता ।
अभिचारादि दोषाणां नाशिनी सिद्धि दायिनी ।
मह्यं तत् कथयस्वाद्य करुणा यदि ते मयि ।।

टिप्पणी– श्री अंगिरा ऋषि ने इस स्तोत्र को मारण प्रयोग के लिए निर्माण किया था। इसका पाठ कभी विफल नहीं होता। इसे लिखकर कण्ठ या भुजा में धारण करने से सभी शत्रुओं का नाश होता है ।।

श्री शिव उवाच: —

साधु साधु महादेवि ! त्वं हि संसार मोचिनी ।
शृणुष्व सुख चित्तेन वक्ष्ये देवि ! समासतः ।।
देवि ! प्रत्यङ्गिरा विद्या सर्व ग्रह निवारिणी ।
मर्दिनी सर्व दुष्टानां सर्व पाप प्रमोचिनी ।।
स्त्री बाल प्रभृतीनां च जन्तूनां हित कारिणी ।
सौभाग्य जननी देवि बल पुष्टि करी सदा ।।

विनियोग: —

ॐ ॐ ॐ अस्य श्री प्रत्यङ्गिरा मन्त्रस्य श्री अंगिरा ऋषिः, अनुष्टुप् छन्दः, श्री प्रत्यङ्गिरा देवता, हूं बीजं ह्रीं शक्तिः, क्रीं कीलकं, ममाभीष्ट सिद्धये पाठे विनियोगः ।

अङ्गन्यास —

श्री अंगिरा ऋषये नमः शिरसि ।
अनुष्टुप् छन्द से नमः मुखे ।
श्री प्रत्यङ्गिरा देवतायै नमः हृदि ।
हूं बीजाय नमः गुह्ये ।
ह्रीं शक्तये नमः पादयोः ।
क्रीं कीलकाय नमः सवाङ्गे ।
ममाभीष्ट सिद्धये पाठे विनियोगाय नमः अंजलौ।

॥ अथ देवी ध्यानम् ॥

भुजैश्चतुर्भिर्धृत तीक्ष्ण बाण
धनुर्वराभीश्च शवांघ्रि युग्मा ।
रक्ताम्बरा रक्त तनस्त्रिनेत्रा
प्रत्यङ्गिरेयं प्रणतं पुनातु ॥

॥ अथ श्री काली प्रत्यङ्गिरा प्रारम्भः॥

ॐ नमः सहस्त्र सूर्येक्षणाय श्रीकण्ठानादि रूपाय पुरुषाय पुरु हुताय ऐं महा सुखाय व्यापिने महेश्वराय जगत् सृष्टि कारिणे ईशानाय सर्व व्यापिने महा घोराति घोराय ॐ ॐ ॐ प्रभावं दर्शय दर्शय।

ॐ ॐ ॐ हिल हिल, ॐ ॐ ॐ विद्युज्जिह्वे बन्ध बन्ध, मथ, मथ, प्रमथ प्रमथ, विध्वंसय विध्वंसय, ग्रस ग्रस, पिव पिव, नाशय नाशय, त्रासय त्रासय, विदारय विदारय, मम शत्रून् खाहि खाहि, मारय मारय, मां सपरिवारं रक्ष रक्ष, करि कुम्भस्तनि सर्वोपद्रवेभ्यः।

ॐ महा मेघौघ राशि सम्वर्तक विद्युदन्त कपर्दिनि, दिव्य कनकाम्भोरुहविकच माला धारिणि, परमेश्वरि प्रिये! छिन्धि छिन्धि, विद्रावय विद्रावय, देवि! पिशाच नागासुर गरुड किन्नर विद्याधर गन्धर्व यक्ष

राक्षस लोकपालान् स्तम्भय स्तम्भय, कीलय कीलय, घातय घातय, विश्वमूर्ति महा तेजसे ॐ ह्रुं सः मम शत्रूणां विद्यां स्तम्भय स्तम्भय, ॐ हूं सः मम शत्रूणां मुखं स्ताम्भय स्ताम्भय, ॐ हूं सः मम शत्रूणां हस्तौ स्तम्भय स्तम्भय, ॐ हूं सः मम शत्रूणां पादौ स्तम्भय स्तम्भय, ॐ हूं सः मम शत्रूणां गृहागत कुटुम्ब मुखानि स्तम्भय स्तम्भय, स्थानं कीलय कीलय, ग्रामं कीलय कीलय, मण्डलं कीलय कीलय, देशं कीलय कीलय, सर्व सिद्धि महाभागे! धारकस्य सपरिवारस्य शान्तिं कुरु कुरु, फट् स्वाहा, ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ, अं अं अं अं अं, हूं हूं हूं हूं हूं, खं खं खं ख़ं खं, फट् स्वाहा। जय प्रत्यङ्गिरे ! धारकस्य सपरिवारस्य मम रक्षां कुरु कुरु, ॐ हूं सः जय जय स्वाहा।

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ब्रह्माणि ! शिरो रक्ष रक्ष, हूँ स्वाहा।

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं कौमारि ! मम वक्त्रं रक्ष रक्ष, हूँ स्वाहा । ॐ ऐं ह्रीं श्रीं वैष्णवि ! मम कण्ठं रक्ष रक्ष, हूं स्वाहा ।

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं नारसिंहि ! ममोदरं रक्ष रक्ष, हूं स्वाहा ।

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं इन्द्राणि ! मम नाभिं रक्ष रक्ष, हूं स्वाहा ।

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं चामुण्डे ! मम गुह्यं रक्ष रक्ष, हूं स्वाहा ।

ॐ नमो भगवति, उच्छिष्ट चाण्डालिनि, त्रिशूल वज्रांकुशधरे मांस भक्षिणि, खट्वांग कपाल वज्रासि-धारिणि ! दह दह, धम धम, सर्व दुष्टान् ग्रस ग्रस, ॐ ऐं ह्रीं श्रीं फट् स्वाहा ।

ॐ दंष्ट्रा-करालि, मम मन्त्र-तन्त्र-वृन्दादीन् विष शस्त्राभिचारकेभ्यो रक्ष रक्ष स्वाहा ।

स्तम्भिनी मोहिनी चैव क्षोभिणी द्राविणी तथा ।
जृम्भिणी त्रासिनी रौद्री तथा संहारिणीति च ।।

शक्तयः क्रम योगेन शत्रु पक्षे नियोजिताः ।
धारिताः साधकेन्द्रेण सर्व शत्रु निवारिणी ।।

ॐ स्तम्भिनि ! स्फ्रें मम शत्रून स्तम्भय २, स्वाहा।
ॐ मोहिनी ! स्फ्रें मम शत्रून मोहय २, स्वाहा ।।

ॐ क्षोभिणि ! स्फ्रें मम शत्रून क्षोभय २, स्वाहा।
ॐ द्राविणि ! स्फ्रें मम शत्रून द्रावय २, स्वाहा।।

ॐ जृम्भिणि! स्फ्रें मम शत्रून जृम्भय २, स्वाहा।
ॐ त्रासिनि ! स्फ्रें मम शत्रून त्रासय २, स्वाहा ।।

ॐ रौद्रि ! स्फ्रें मम शत्रून संतापय २, स्वाहा ।
ॐ संहारिणि ! स्फ्रें मम शत्रून संहारय २, स्वाहा।।

॥ अथ फलश्रुतिः ॥

य इमां धारयेद् विद्यां, त्रि-सन्ध्यं वापि यः पठेत् ।
सोऽपि व्यथागतश्चैव हन्याच्छत्रून न संशयः ॥
सर्वतो रक्षतो देवि ! भयेषु च विपत्तिषु ।
महा भयेषु सर्वेषु न भयं विद्यते क्वचित् ॥
विद्यानामुत्तमा विद्या वाचिता धारिता पुनः ।
लिखित्वा च करे कण्ठे बाहो शिरसि धारयेत् ॥
स मुच्यते महा घोरैर्मृत्यु तुल्यर्दुरासदैं ।
दुष्ट ग्रह व्याल चौर रक्षो यक्ष गणास्तथा ॥
पीडां न तस्य कुर्वन्ति ये चान्ये पीडका ग्रहा ।
हरि चन्दन मिश्रेण गोरोचन कुंकमेन च ॥
लिखित्वा भूर्ज पत्रे तु धारणीया सदा नृभिः ।
पुष्प धूप विचित्रैश्च बल्युपहार वन्दनैः ॥
पूजयित्वा यथा न्यायं त्रि-लोहेनैव वेष्टयेत् ।
धारयेद् य इमां मन्त्री लिखित्वा रिपु नाशिनीम् ॥

विलयं यान्ति रिपवः प्रत्यङ्गिरा विधारणात् ।
यं यं स्पृशति हस्तेन यं यं खादति जिह्वया ।।

अमृतत्वं भवेत् तस्य मृत्युर्नास्ति कदाचन ।
त्रिपुरं तु मया दग्धमिमं मन्त्रं विजानता ।।

निर्जितास्ते सुराः सर्वे देवैर्विद्याधरादिभिः ।
दिव्यैर्मन्त्र पदैर्गुह्यैः सुखोपायैः सुरक्षितैः ।।

पठेद् रक्षा विधानेन मत्रराज प्रकीर्तितः ।
क्रान्ता दमनकं चैव रोचनं कुंकुमं तथा ।।

अरुष्करं विषाविष्टं सिद्धार्थं मालतीं तथा ।
एतद् द्रव्य गणं भद्रे ! गोलमध्ये निधापयेत् ।।

संस्कृतं धारयेन्मन्त्री साधको ब्रह्म वित् सदा ।
अङ्गिरास्य मुनि प्रोक्तश्छन्दोनुष्टुपुदाहृतः ।।

देवता च स्वयं काली काम्येषु विनियोजयेत् ।।

।। इति श्री अंगिरा ऋषि कृतं काली प्रत्यङ्गिरा समाप्तम् ।।

कालिकाष्टकम्

॥ ध्यानम् ॥

गलद्-रक्तमुण्डावली -कण्ठमाला
महाघोररावा सुदंष्ट्रा कराला ।
विवस्त्रा श्मशानालया मुक्तकेशी
महाकाल-कामाकुला-कालिकेयम् ॥१॥

भुजे वामयुग्मे शिरोऽसी दधाना
वरं दक्षयुग्मेऽभयं वै तथैव ।
सुमध्याऽपि तुङ्गस्तनाभारनम्रा
लसद्रक्त सृक्कद्वया सुस्मितास्या ॥२॥

शवद्वन्द्वकर्णावतंसा - सुकेशी
लसत्प्रेतपाणि-प्रयुक्तैक - काञ्ची ।
शवाकार-मञ्चाधिरूढा शिवाभि-
श्चतुर्दिक्षु शब्दायमानाऽभिरेजे ॥३॥

विरञ्च्यादिदेवास्त्रयस्ते गुणांस्त्रीन्
समाराध्य कालि ! प्रधाना बभूवुः ।

अनादिं सुरादिं मखादिं भवादिं
स्वरूपं त्वदीयं न विन्दन्ति देवाः ॥४॥
जगन्मोहनीयं तु वाग्वादिनीयं
सुहृत्पोषिणीं शत्रुसंहारणीयम् ।
वचः स्तम्भनीयं किमुच्चाटनीयं
स्वरूपं त्वदीयं न विन्दन्ति देवाः ॥५॥
इयं स्वर्गदात्री पुनः कल्पवल्ली
मनोजांस्तु कामान् यथार्थं प्रकुर्यात् ।
कथा ते कृतार्था भवन्तीति नित्यं
स्वरूपं त्वदीयं न विन्दन्ति देवाः ॥६॥
सुरापानमत्ते ! सुभक्तानुरक्ते
लसत्पूतचित्ते ! सदाविर्भवस्ते ।
जपं-ध्यान-पूजा -सुधाधौतपङ्काः
स्वरूपं त्वदीयं न विन्दन्ति देवाः ॥७॥
चिदानन्दकन्दं हसन्मन्दमन्दं
शरच्चन्द्रकोटि-प्रभापुञ्ज-बिम्बम् ।

मुनीनां कवीनां हृदि द्योतमानं
स्वरूपं त्वदीयं न विन्दन्ति देवाः ॥८॥

महामेघकाली सुरक्ताऽपि शुभ्रा
कदाचिद् विचित्राकृतिर्योगमाया ।
न बाला न वृद्धा न कामातुराऽपि
स्वरूपं त्वदीयं न विन्दन्ति देवाः ॥९॥

क्षमस्वापराधं महागुप्तभावं
मया लोकमध्ये प्रकाशीकृतं यत् ।
तव ध्यानपूतेन चापल्यभावात्
स्वरूपं त्वदीयं न विन्दन्ति देवाः ॥१०॥

॥ फलश्रुतिः ॥

यदि ध्यानयुक्तः पठेद् यो मनुष्य-
स्तदा सर्वलोके विशालो भवेच्च ।
गृहे चाऽष्टसिद्धिर्मृते चापि मुक्तिः
स्वरूपं त्वदीयं न विन्दन्ति देवाः॥११॥

***

॥ इति सविधानं विपरीत प्रत्यङ्गिरा स्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥
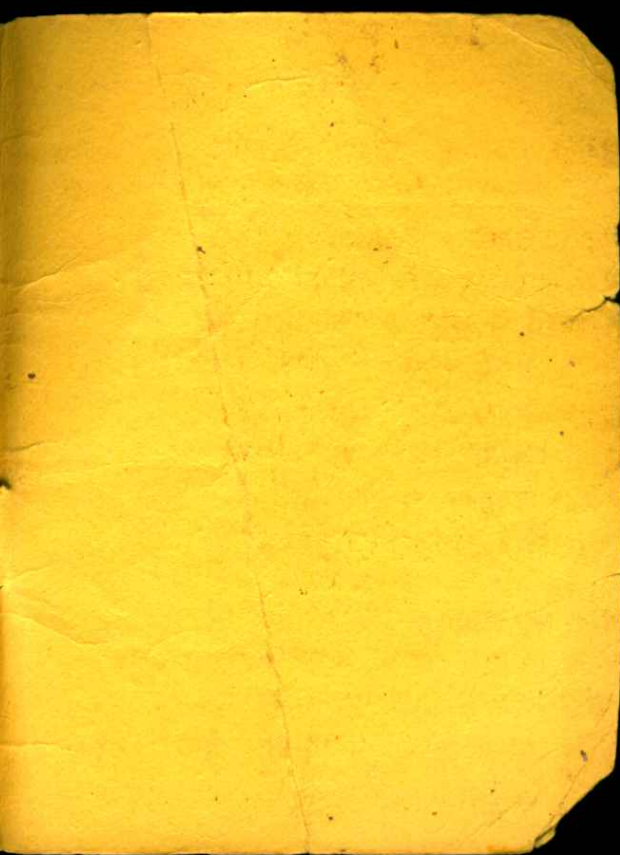
देवी - आरती

जय अम्बे गौरी मैया जय श्यामा गौरी।
मैया जय मंगलकरणी, मैया जय आनन्दकरणी।।
तुमको निशिदिन ध्यावत हरि ब्रह्मा शिवरी।।जय०।।
मांग सिन्दूर विराजत टीको मृगमद को।
उज्जवल से दोउ नैना चंद्रबदन नीको।।जय०।।
कनक समान कलेवर रक्ताम्भर राजै।
रक्त पुष्प गल माला कण्ठन पर साजै।।जय०।।
केहरि वाहन राजत खड्ग खप्पर धारी।
सुर नर मुनि जन सेवत तिनके दुखहारी।।जय०।।
कानन कुण्डल शोभित नासाग्रे मोती।
शुम्भ निशुम्भ विदारे महिषासुर घाती।।जय०।।
धूम्रविलोचन नैना निशिदिन मदमाती।
चण्ड मुण्ड संहारे शोणित बीज हरे।।जय०।।
मधु कैटभ दोउ मारे सुर भयहीन करे।
ब्रह्माणी रुद्राणी तुम कमलारानी।।जय०।।
आगम निगम बखानी तुम शिव पटरानी।
चौंसठ योगिनि गावत नृत्य करत भैरूँ।।जय०।।
बाजत ताल मृदंगा औ बाजत डमरू।।जय०।।
तुम ही जग की माता तुम ही हो भरता।
भक्तन की दुख हरता सुख सम्पति करता।।जय०।।
भुजा चार अति शोभित वरमुद्रा धारी।
मनवांछित फल सेवत नर नारी।।जय०।।
कंचन थाल विराजत अगर कपूर बाती।
श्रीमाल केतु में राजत कोटि रतन ज्योती।।जय०।।
श्री अम्बे जी की आरती जो कोई नर गावै।
कहत शिवानन्द स्वामी सुख सम्पत्ति पावै।।जय०।।